E-ISSN No: 2456-6713 Print ISSN No: 3048-6459

International Educational Applied Research Journal

Peer-Reviewed Journal-Equivalent to UGC Approved Journal

A Multi-Disciplinary Research Journal

छतरपुर जिले की लोक संस्कृति में प्रचलित प्रमुख प्रदर्शनकारी एवं दृश्य कलाएँ

प्रकाश चंद चौरसिया

पी.एच.डी. शोधार्थी (इतिहास), शासकीय, स्नातकोत्तर महाविद्यालय मुरैना (म.प्र.)

डॉ. जितेन्द्र शर्मा

प्राचार्य पं श्यामाचरण उपाध्याय महाविद्यालय, जौरा खुर्द, मुरैना (म.प्र.)

Paper Rcevied date

05/05/2025

Paper date Publishing Date

10/05/2025

DOI

https://doi.org/10.5281/zenodo.15615545

IMPACT FACTOR 5.924

Abstract

भारत के हृदयस्थल में स्थित बुंदेलखण्ड का छतरपुर जिला एक गौरवशाली संस्कृति का वाहक रहा है। इस क्षेत्र में प्रचलित प्रदर्शनकारी कलाओं में लोक नृत्य, लोक संगीत तथा लोकनाट्यों की सशक्त परंपरा है। यहाँ के समाज में लोकनृत्य उल्लासपूर्ण अभिव्यक्ति का सशक्त माध्यम है। लोक नृत्यों के लगभग दो दर्जन परंपरागत स्वरुप मिलते है । यहाँ मुख्य रूप से राई नृत्य, मोनिया नृत्य, बधाई नृत्य तथा ढिमरयाई नृत्य के बारे में उल्लेख किया गया है। ये लोक नृत्य विभिन्न ऋतुओं, त्योहारों तथा पर्वो पर आयोजित होते हैं। बुंदेलखण्ड की उत्सवधर्मी लोक संस्कृति में लोकनाट्यों का प्रचलन आदिकाल से है। इसमें नृत्य, संगीत, गायन, अभिनय सभी का अद्भुत समन्वय होता है। यहाँ प्रमुख रुप से स्वाँग, कतकियारियों की सखी छेड़-छाड़ लीला, रावला (राहुला) एवं रामलीला का उल्लेख किया गया है।

कलाएँ मनोभावों को व्यक्त करने का सौंदर्यपूर्ण तथा मुख्य माध्यम है। ये अंतरात्मा को आनंद प्रदान करने तथा मानसिक विकास में सहायक होने के साथ ही समाज के सांस्कृतिक विकास को समझने का आधार प्रदान करती हैं। दृश्य कलाएँ सर्वांगीण विकास में सहायक है। लोक चित्रकला हमें कई स्वरूपों में देखने को मिलती है। आनुष्ठानिक चित्रकला के अंतर्गत विभिन्न पर्वो तथा मांगलिक अवसरों पर बनाए जाने वाले भूमि-भित्त अलंकरण आते है। देह श्रृंगार कला के अन्तर्गत गोदना, मेहँदी तथा महावर

E-ISSN No: 2456-6713 Print ISSN No: 3048-6459

International Educational Applied Research Journal

Peer-Reviewed Journal-Equivalent to UGC Approved Journal

A Multi-Disciplinary Research Journal

की लोकशैलियाँ शामिल है। इस क्षेत्र में गोबर की 'उपल कला' के भी अनेक रूप देखने को मिलते है। मूर्तिकला तथा खिलौने आदि बनाने की परंपरा इस लोकांचल में विद्यमान है। यहां काष्ठ शिल्प के अन्तर्गत वस्तुओं को अत्यंत कलात्मकता के साथ बनाया जाता है। यहां चंदेल काल के लगभग सभी मंदिर विशिष्ट मूर्तियों से अलंकृत है। बुंदेलखण्ड का यह क्षेत्र सांस्कृतिक दृष्टि से कला की सभी विधाओं का केन्द्र रहा है।

प्रदर्शनकारी कलाएँ:-

इस क्षेत्र में प्रदर्शनकारी कलाओं के अन्तर्गत लोकनृत्य, लोकनाट्यों तथा लोक संगीत की मजबूत परंपरा है। प्रमुख लोकनृत्य एवं लोकनाट्यों का विवरण इस प्रकार है:-

लोक नृत्य:- बुन्देलखण्ड के छतरपुर जिले में प्रचलित लोक नृत्य अपनी ख्याति का झण्डा गाड़ चुके हैं। यहाँ का कोई भी सांस्कृतिक कार्यक्रम यहाँ के नृत्यों के बिना अधूरा सा लगता है। यहाँ के नृत्य बुन्देलखण्ड की संस्कृति की विशेष पहचान है। कुछ प्रमुख नृत्य निम्नवत हैं-

1.राई :- विश्वस्तर पर सबसे अधिक लोकप्रियता प्राप्त करने वाला बुन्देलखण्ड का नृत्य राई है। 'राई नृत्य' के नामकरण के बारे मे कई मत प्रचलित है। राई का मतलब छोटी सरसों होता है। जिस तरह किसी थाली में रखे सरसों के दाने तीव्रता से इधर-उधर घूमते है, उसी तरह राई नृत्य में पारंगत नृत्यांगना भी नगड़िया, ढोलक, झीका और रामतूला जैसे पारंपरिक वाद्ययंत्रो की थाप पर तेजी से एक सिरे से दूसरे सिरे तक गोल-गोल घूमती है। मुख्य रूप से यह नृत्य फाल्गुन एवं चैत्र महीनों में होता है। इस नृत्य में कला-प्रवीणता के साथ नृत्यांगना का दम-खम भी सराहनीय होता है, क्योंकि नृत्य सारी रात चलता है। यह एक श्रंगार प्रधान नृत्य है। (1) इस नृत्य में बेड़नी (नर्तकी) प्रेम, वियोग, मिलन, संकोच आदि भावों को गीत के रूप में ऊंची आवाज में गाती हुई, तेज गति के साथ नाचती है। नर्तकी बड़े घेरे वाला लंहगा,ओढ़नी, पूरी या आधी आस्तीन का सलूका पहनकर नाचती है। नर्तकी की भाव- भंगिमा से दर्शक मंत्रमुग्ध हो जाते हैं। (2) इसमें प्रमुख रुप से स्वांग, फाग, ख्याल, कहरवा आदि गाये जाते हैं।

E-ISSN No: 2456-6713 Print ISSN No: 3048-6459

International Educational Applied Research Journal

Peer-Reviewed Journal-Equivalent to UGC Approved Journal

A Multi-Disciplinary Research Journal

2.बधाई नृत्य:- बुन्देलखण्ड की संस्कृति का प्रमुख पारंपरिक लोक नृत्य है, जो छतरपुर जिले में भी अत्यंत लोकप्रिय है। किसी भी शुभ अवसर पर इस नृत्य के द्वारा बधाई दी जाती है। पुसंवन संस्कार के समय, जन्मोत्सव के समय, चीकट उतारने के समय और विशेष धार्मिक आयोजनों तथा शुभ अवसरों पर बधाई नृत्य की परंपरा रही है। (3) बधाई नृत्य में शुभ अवसरों पर खुशी व्यक्त की जाती है। इसे समूह में किया जाता है तथा आशीर्वाद स्वरुप माना जाता है। इसमें पारंपरिक बधाई गीत होते हैं, जिनमें स्थानीय देवी-देवताओं एवं नायकों की प्रशंसा की जाती है। पारंपरिक बुंदेली परिधानों को पहना जाता है। पुरुष धोती-कुर्ता और पगड़ी पहनते है, जबकि महिलायें रंगीन साड़ी या घाघरा चोली पहनती है।

3.मोनिया नृत्य:- कुछ विद्वान इस नृत्य को वरेदी नृत्य तथा दिवारी नृत्य भी कहते हैं। प्रायः यह नृत्य बरेदियों (चरवाहों) अथवा अहीरों अथवा यादवों द्वारा किया जाता है। दीपावली के अवसर पर यह नृत्य बड़े ही उत्साह के साथ किया जाता है। यह न केवल मनोरंजन का साधन है, अपितु क्षेत्र की सांस्कृतिक पहचान और सामाजिक एकता का भी प्रतीक है।

ऐसी मान्यता है, कि जब श्री कृष्ण ने गोवर्धन पर्वत को अपनी छोटी अंगुली पर उठाकर गोकुलवासियों को इंन्द्र के प्रकोप से बचाया। दीपावली के दूसरे दिन गोवर्धन पूजा की जाती है। इन्द्र पर कृष्ण विजय के उपलक्ष्य में प्रथम बार ग्वाल वालों ने मौन रहकर मोनिया नृत्य किया था। इस नृत्य की परंपरा तभी से प्रारंभ हुई। (4) मौनिया व्रत रखते हुये जिन लोगों को 12 वर्ष पूर्ण हो जाते हैं वे कार्तिक माह की पूर्णिमा (त्रिपुरारी पूर्णिमा) के दिन मथुरा वृन्दावन जाते हैं। वहाँ गोवर्धन पर्वत की परिक्रमा करते हैं। वापस आकर कन्या भोज कराते हैं। (5)

4.ढिमरयाई नृत्य :- बुंदेलखंड में पानी तथा मछलियों के व्यवसाय से जुड़ी ढीमर जाति की अपनी विशेषता है। इनके अपने लोकगीत, लोकनृत्य तथा लोकनाट्य है, जिनकों विशेष अवसरों पर प्रस्तुत किया जाता है। स्त्रियाँ एवं पुरुष इसमें समान रूप से सम्मिलित होते हैं। जब विवाह आदि मांगलिक अवसरों पर वे सामूहिक नृत्य करते हैं, तब उनके वाद्यो में सारंगी, मृदंग, ढोलक, नगड़िया, रमतूला झाँझ, मजीरा, एवं लोहे का तवा आदि होते हैं। सारंगी बजाता हुआ मुख्य नर्तक मंडलाकार घूमकर नृत्य करता है। साथ में उनकी स्त्रियाँ भी नृत्य करती है। (6) ये लोग भगवान शिव तथा शालिग्राम को अपना आराध्य मानते है। इसलिए उनकी सुमरिनी, इन्हीं से शुरु होती है।

E-ISSN No: 2456-6713 Print ISSN No: 3048-6459

International Educational Applied Research Journal

Peer-Reviewed Journal-Equivalent to UGC Approved Journal

A Multi-Disciplinary Research Journal

लोकनाट्य: - लोक नाट्यों का प्रचलन बुंदेलखण्ड की लोक संस्कृति में आदिकाल से है। इसमें संगीत, गायन, अभिनय (संवाद), नृत्य का समन्वय होता है।

1.स्वांग :- किसी की प्रकृति का अनुकरण, उसका रुप रखकर प्रस्तुत करना स्वाँग कहलाता है। विवाह, जन्म दिवस तथा अन्य पारिवारिक उत्सवों में स्वांग भरने की परंपरा है। प्रायः यह एकल अभिनय विधा है, इसमें पुरुष अथवा महिलाएँ स्वांग भरती है। इसमें मंच की जरूरत नहीं होती है, यह प्रायः चबूतरे या चौपाल में हो जाते है। इसमें मुख्य रूप से हास्य अभिनय होता है। (7)

2.कतकियारियों की सखी छेड़- छाड़ लीला :- जिन महिलाओं के द्वारा कार्तिक महीने में 'कार्तिक नहान' पर्व व्रत रखा जाता है, वे घर पड़ोस के किसी मंदिर या घर के भीतर 'सखी छेड़ने की लीला' करती है। वे कृष्ण को गली-गली ढूंढकर कार्तिक नहान के चबूतरे में आकर राधा-कृष्ण की सखी - छेड़ लीला करती है। उन महिलाओं तथा लड़कियों में से ही कुछ नृत्य, गायन और अभिनय के साथ आनंद मनाती है।

3.रावला (राहुला) :- यह चमार जाति (रैदास समाज) का जातीय नृत्य है, जो उनके पारिवारिक या जातीय उत्सवों पर किया जाता है। इसको सावन में फुरसत के दिनों में भी आयोजित किया जाता है। इसमें गायन के साथ नृत्य और नाट्य का भी समन्वय होता है जिसमें हास्य हो, समाज की किसी परंपरा पर कटाक्ष हो तथा शिक्षाप्रद हो। इसमें वेशभूषा कथानक के चरित्रों के अनुसार होती है। स्त्रियों की भूमिका भी पुरुष ही करते हैं। इसका प्रदर्शन खुले चबूतरे, चौपाल के मैदान या मंच पर होता है। (8)

4.रामलीला :- रामकथा मंचन की यह परंपरा रामलीला के नाम से प्रसिद्ध हो गई। यह श्री राम के चरित्र का लीलात्मक अनुकरण है। यह परंपरा स्वयं श्रीराम के समय से ही चली आ रही है। महर्षि बाल्मीकि ने रामायण लिखकर उसका लव-कुश गाथा परंपरा से मंचन कराया। तुलसीदास जी ने रामचरितमानस लिखकर स्वयं उसका मंचन काशी तथा अयोध्या में कराया। श्री राम का जन्म भले ही अयोध्या में हुआ हो परन्तु उनकी लीला भूमि बुंदेलखण्ड रही है। कई स्थानों पर यहाँ रामलीला मंचन करने वाली स्थानीय मंडलियाँ है, जो विभिन्न जगहों पर जाकर रामलीला मंचित करती है। वतर्मान में कई जगहों पर रामलीला समिति का गठन करके अत्यंत मर्यादापूर्ण रामलीला मंचित की जाती है।

दृश्य कलाएँ:- मनोभावों को अभिव्यक्त करने का महत्वपूर्ण माध्यम कलाएँ है। इसके अन्तर्गत कुछ प्रमुख कलाओं का विवरण निम्नानुसार है:-

E-ISSN No: 2456-6713 Print ISSN No: 3048-6459

International Educational Applied Research Journal

Peer-Reviewed Journal-Equivalent to UGC Approved Journal

A Multi-Disciplinary Research Journal

चित्रकला :- चन्देल चित्रकला का कोई प्रभावकारी नमूना प्राप्त नहीं होता है। मूर्तियों पर के आलेखन ही केवल इसके उदाहरण हैं। भीतर की मूर्तियाँ बड़े श्रम और वैभव से नीले, हरे, लाल और पीले रंगो से रंगी गई है। ऐसा प्रतीत होता है, मानो हाल में ही उनपर वार्निश का लेप किया गया है। खजुराहो में स्थित जैन मंदिरो में भी केवल रंग लेप के ही रूप में चित्रकला के उदाहरण मिलते है। (9)

आनुष्ठानिक चित्रकारी :- यह सबसे अधिक प्रचलित लोक विधा है, जिसे रंगोली, अल्पना, मांडणा, ऐपण, चौक पूरना आदि नामों से परिवार की महिलाओं अथवा पुरोहित वर्ग द्वारा चित्रित किया जाता है। साल भर के तीज-त्योहारों के अनुरूप ये अनुष्ठानिक चित्र बनाए जाते है। पूजाओं के अवसर पर बनाए जाने वाले आलेखनों में 'स्वास्तिक' बनाने की भी परंपरा है। स्वास्तिक का अर्थ होता है मंगल करने वाला । कुछ विचारकों का मानना है, कि यह स्वास्तिक चौराहे का प्रतीक है, जहाँ से चतुष्पथी जीवन के चार मार्ग धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष की ओर जाते हैं। स्वास्तिक का लोकवाणी शब्द 'साँतिया' है। (10) लोकांकनो में दीपक, शंख, गज तथा अश्वारोही भी चित्रित किए जाते हैं। इन चित्रों को बनाने के लिए खड़िया, गेरु, रामरज, हल्दी, रोली, एपन (चावल का घोल), मिट्टी और गोबर है।

बुंदेलखण्ड में चित्र बनाने की एक विशेष शैली है, जिसे चितेऊरी कहते है। इसमें चटख रंगों जैसे लाल, गुलाबी, नीला, हरा तथा पीले का प्रयोग होता है तथा इसे बनाने वाले चितेउरे कहलाते हैं। इसमें गणेश जी के विभिन्न रुप, माला पहनाते हुए वर-वधू, कलश धारण किए हुए महिलाएँ, अश्वारोही, गजारोही, डोली ले जाते कहारों, श्रवण कुमार के कॉवर चित्र आदि की बहुलता होती है। (11)

मूर्तिकला:- चन्देल काल के लगभग सभी मंदिर विशिष्ट मूर्तियों से अलंकृत है। इन मूर्तियों का अध्ययन करने से हमें धार्मिक एवं धर्म निरपेक्ष प्रकार की प्रतिमाएँ प्राप्त होती है। धार्मिक मूर्तिकला में हिन्दू मूर्तियाँ, जैन मूर्तियों तथा बौद्ध मूर्तियाँ प्राप्त हुई है तथा धर्म निरपेक्ष प्रतिमाओं के अन्तर्गत नर-नारी की प्रतिमाएँ, पशु-पक्षियों की प्रतिमाएँ तथा उन्मुक्त प्रतिमाओं का अंकन प्राप्त होता है।

गणेश से सम्बन्धित प्रतिमाएँ खजुराहों में अधिक मात्रा में प्राप्त हुई है। खजुराहों में वैष्णव धर्म से सम्बन्धित प्रतिमाएँ भी प्राप्त हुयी है। हिन्दू देवी प्रतिमाओं में देवियों के साथ-साथ सप्त मात्रकाओं का

ं विष्णु के कई नामों के साथ लक्ष्मी, श्री, कमला आदि

E-ISSN No: 2456-6713 Print ISSN No: 3048-6459

International Educational Applied Research Journal

Peer-Reviewed Journal-Equivalent to UGC Approved Journal

A Multi-Disciplinary Research Journal

नामों का उल्लेख मिलता है। (12) जनरल कनिंघम को 13 जैन मूर्तियों प्राप्त हुयीं है जो घंटई मंदिर के अलंकरण का साधन थी। (13)

बौद्ध धर्म से संबंधित मूर्तियाँ चन्देलों के समय में कम संख्या में मिली है। स्थापत्य नागर शैली के उत्कृष्ट उदाहरण के साथ-साथ खजुराहों के मंदिर मिथुन प्रतिमाओं के लिए भी प्रसिद्ध है। ये मूर्तियाँ लक्ष्मण, कन्दरिया महादेव तथा विश्वनाथ मंदिरों की प्रदक्षिणापथों तथा पट्टिकाओं पर उत्कीर्ण करवाये गये हैं।

बुंदेली शिल्प के अन्तर्गत मूर्तिकला की दृष्टि से महालक्ष्मी तथा हस्ति, सुआटा, गणगौर, गणेश-लक्ष्मी की प्रतिमाएँ, मलमास में काली मिट्टी की शिव-प्रतिमाएँ, साँउनी के लिए रंग-बिरंगी मटकियाँ, दीपक आदि बनाने की परंपरा इस लोकांचल में विद्यमान है। जो अब व्यावसायिक रूप ग्रहण करती जा रही है।

उपलकला :- गोबर की 'उपलकला' के अनेक रूप इस क्षेत्र में पाए जाते है। इनकों भित्ति पर गोबर या मिट्टी को मिलाकर अथवा रद्दी गलाकर उसकी लुग्दी बनाकर उभार कर बनाया जाता है। इसका सबसे अच्छा उदाहरण नौरता के अंतर्गत बालिकाओं द्वारा 'सुआटा' खेल में दीवाल पर बनाया गया 'चौखटा' एवं उसके अंदर बनीं अन्य आकृतियाँ होती है, जो गोबर को उभार कर बनाई जाती है। एक प्रचलित शब्द 'गोबर गणेश' है, यानी गोबर के बने हुए गणेश जी। उपलकला में पूजा के लिए गोबर की मूर्तियाँ बनाने की परंपरा रही है। भैया दूज को महिलाएँ दरवाजे के बाहर दोज की पूजा रखती है। इसमें गोबर से बहिन की मूर्ति बनाकर बैठाई जाती है तथा उसका श्रृंगार किया जाता है। पूजा एवं अन्य अवसरों पर भूमि को गोबर से लीपकर उस पर चौक पूरने की परंपरा रही है। (14)

देह श्रृंगार कला :- इसके अन्तर्गत मेहंदी, गोदना तथा महावर प्रमुख रुप से प्रचलित है। मेहंदी की रचना पूरे देश में महिला श्रृंगार का प्रमुख प्रसाधन है। इसे सौभाग्य का प्रतीक माना जाता है। विवाह के समय मेंहदी रस्म का आयोजन किया जाता है। मेहंदी की रचना के गाढ़ेपन से महिलाएँ यह अनुमान लगाती है, कि "उसका प्रिय उसे कितना चाहता है?" मेहंदी रचना के डिजायन अब आकर्षक रूप में पुस्तकों में भी मिलते है।

देह श्रृंगार में 'महावर' का भी विशेष महत्व है, इसे 'आल्ता' भी कहते हैं। क्योंकि यह 'आल' नामक वृक्ष के फूल से रस निकालकर बनाया जाता है। पैरों पर इससे कई तरह के लोक चित्रांकन किये जाते है।

E-ISSN No: 2456-6713 Print ISSN No: 3048-6459

International Educational Applied Research Journal

Peer-Reviewed Journal-Equivalent to UGC Approved Journal

A Multi-Disciplinary Research Journal

सुहागन स्त्रियों में महावर लगाना अनिवार्य है। महिलायें पहले अपने पूरे पंजे को एड़ी तक हल्दी से पोतती है तथा उसके बाद महावर लगाती है। (15)

आदिवासी तथा ग्रामीण अंचलों की तरह बुन्देलखण्ड में गुदना गुदवाने की परंपरा है। अपने सौंदर्य की वृद्धि के लिए महिलाएँ गुदना गुदवाती है। यह मशीन एवं हाथ दोनों से गोदे जाते है, किन्तु हाथ से गोदना गुदवाना अधिक कष्टदायक है। प्रायः गोदना लोकांचल के मेलो में महिलाओं द्वारा जिन्हे 'गुदनारी' कहते हैं, गोदे जाते है। इसमें सुई को गोदना लेप में डुबाकर निरंतर टोंचने से पक्के रंग की आकृति बनती है तथा मनचाही आकृति बना दी जाती है। (16)

काष्ठ शिल्प:- इसके अन्तर्गत घरों में नक्काशीदार दरवाजे, चौखटें, कृषि उपकरण, मूसल, मंडप, पूजा की चौकी, भगवान का सिंहासन, इत्र तथा जेवर रखने की पेटियाँ, कलमदान आदि आते है। इनको प्रायः बढ़ईगिरी करने वाले शिल्पी बनाते है। कुछ वस्तुओं को कलात्मकता के साथ बनाया जाता है। खिलौने तथा चुड़ियाँ भी कलात्मक बनाई जाती है। (17)

सांस्कृतिक दृष्टि से यह क्षेत्र कला की सभी विधाओं का केंद्र रहा है। जब ये कलाएँ शास्त्र-विद्वानों से ऊपर उठकर जन-जन द्वारा अंगीकृत होकर लोकरुचि तथा सामूहिक अभिव्यक्ति का माध्यम बनती है तब इन्हें लोककला के नाम से पुकारा जाता है।

E-ISSN No: 2456-6713 Print ISSN No: 3048-6459

International Educational Applied Research Journal

Peer-Reviewed Journal-Equivalent to UGC Approved Journal

A Multi-Disciplinary Research Journal

संदर्भ सूची :-

1. तिवारी, बलभद्र, राई एवं स्वॉग, मध्यप्रदेश जनसंपर्क विभाग, भोपाल, 2010, पृ. 21
2. वहीं, पृ. 60
3. वही, पृ. 50
4. 'शुक्ल, परशुराम बिरही, बुन्देलखण्ड की संस्कृति, मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, भोपाल, 2001, पृ. 83
5. डॉ. ब्रजेश कुमार, बुन्देलखण्ड की संस्कृति, राधा पब्लिकेशन नई दिल्ली, 2019, पृ. 75
6. गुप्त, अयोध्या प्रसाद 'कुमुद, बुंदेलखण्ड की लोक संस्कृति और साहित्य, राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, भारत, 2021, पृ. 169
7. वही, पृ॰ 173
8. वही, पृ॰ 174
9. मिश्र, डॉ. अवनीश चंद्र, चंदेल वंश का इतिहास एवं संस्कृति, साहित्य संगम इलाहाबाद, 2018, पृ. 337
10. पूर्वोक्त, गुप्त, अयोध्या प्रसाद कुमुद, पृ. 180-181
11. वही, पृ॰ 183
12. मित्रा, एस. के. द अर्ली रुलर्स ऑफ खजुराहो, मोतीलाल बनारसी दास, दिल्ली, 1977, पृ. 190
13. पाण्डेय, अयोध्या प्रसाद, चन्देल कालीन बुन्देलखण्ड का इतिहास, हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग, 1968, पृ. 218
14. पूर्वोक्त, गुप्त, अयोध्या प्रसाद 'कुमुद', पृ. 185
15. वही, पृ. 187
16. वही, पृ. 187
17. वही, पृ. 190